Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 2 | Issue 4 | (Oct – Dec 2025)

ऋतुराज के काव्य में स्त्री की सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्रण

नरेन्द्र कुमार [1], डॉ. निरुपमा हर्षवर्धन [2]
[1] शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर
[2] शोध निर्देशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर

सारांश

समकालीन हिंदी कविता समाज के बदलते परिवेश और जीवन-संघर्षों का सशक्त दर्पण है। विशेषतः जनवादी कविता ने साहित्य को जनजीवन के ठोस यथार्थ से जोड़ते हुए समाज के उपेक्षित, दलित, श्रमिक तथा स्त्री वर्ग की वास्तविक परिस्थितियों को केंद्र में रखा है। जनवादी कवियों का मानना रहा है कि कविता का उद्देश्य केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन में सक्रिय भूमिका निभाना है। इसी दृष्टि से उन्होंने स्त्री के अदृश्य श्रम, दोहरे शोषण और उसके संघर्षशील अस्तित्व को आवाज़ दी है। जनवादी कविता स्त्री को किसी देवी का प्रतीक या करुणा-मूर्ति के रूप में नहीं देखती, बल्कि एक जीवित, संघर्षरत, श्रमशील और चेतन मानव के रूप में प्रस्तुत करती है। समकालीन स्त्री जहाँ आर्थिक शोषण और पितृसत्ता के दबावों से जूझती है, वहीं अपनी अस्मिता, श्रम और आत्मबल के आधार पर प्रतिरोध भी करती है। इसी परंपरा में ऋतुराज की कविताएँ जनवादी चेतना का महत्त्वपूर्ण स्वर हैं। वे स्त्री को जीवन के कठोर यथार्थ के बीच भी हँसते, संघर्ष करते और श्रम से सुगंधित जीवन रचते देखते हैं। उनकी 'गरीब स्त्री', 'कन्यादान', 'मास्टरनी', 'माँ का दूध' जैसी कविताएँ स्त्री के भीतर दबे दर्द, श्रम, संवेदना और जिजीविषा को अत्यंत गहनता से व्यक्त करती हैं। ऋतुराज की काव्य दृष्टि में स्त्री कोई मिथकीय छवि नहीं, बल्कि सामाजिक अन्याय के विरुद्ध खड़ी होने वाली सृजनशील शक्ति है। इस प्रकार समकालीन जनवादी कविता स्त्री के वास्तविक जीवन-संघर्षों को उजागर कर समाज के लिए चेतना का दस्तावेज़ बनती है। यह बताती है कि स्त्री की अस्मिता, स्वाधीनता और गरिमा के बिना जनवाद अपूर्ण है।

मुख्य शब्द - स्त्री-चेतना, पितृसत्ता, सामाजिक यथार्थ, श्रमशील स्त्री, मानवीय गरिमा, आर्थिक व सामाजिक शोषण

मूल आलेख

समकालीन हिंदी कविता समाज के बदलते परिवेश, जीवन-संघर्ष, और मानवीय संबंधों की जटिलताओं का सशक्त दस्तावेज़ है। विशेषतः जनवादी कविता ने समाज के उपेक्षित, शोषित, दलित, श्रमिक और स्त्री वर्ग की वास्तविक परिस्थितियों को केंद्र में रखकर साहित्यिक चेतना का नया अध्याय रचा है। इस काव्यधारा ने कविता को 'सौंदर्य के अमूर्त संसार' से निकालकर समाज के ठोस यथार्थ से जोड़ा। जनवादी कवियों ने माना कि कविता का मूल उद्देश्य समाज के परिवर्तन में योगदान देना है। इसी दृष्टि से उन्होंने स्त्री की सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्थिति को कविताओं में सजीव रूप में चित्रित किया।

स्त्री, जो शताब्दियों से सामाजिक-सांस्कृतिक बंधनों में जकड़ी रही है, जनवादी कविता में पहली बार अपने वास्तविक रूप में दिखाई देती है, एक संघर्षशील, श्रमशील, संवेदनशील और आत्म-सम्मान से परिपूर्ण अस्तित्व के रूप में। स्त्री का श्रम अदृश्य है चाहे वह खेतों में हो, कारखानों में या घर के भीतर। जनवादी कविता इसी 'अदृश्य श्रम' को दृश्यमान बनाती है। कविता समाज के 'नीचे तबके' के उन लोगों की आवाज़ बनती है, जिनकी आवाज़ें सदियों से दबा दी गईं थीं।

समकालीन जनवादी कवियों ने स्त्री को किसी देवी या कोमल भावनाओं के प्रतीक के रूप में नहीं, बल्कि एक यथार्थ मनुष्य के रूप में प्रस्तुत किया है। वह अब केवल प्रेमिका या माँ नहीं, बल्कि श्रमिक, किसान, शिक्षिका, आंदोलनकारी और सोचने-विचारने वाली चेतन सत्ता है। इन कविताओं में स्त्री को दोहरे शोषण का शिकार दिखाया गया है -

आर्थिक शोषण: श्रम के बावजूद मान्यता न मिलना।

सामाजिक/लैंगिक शोषण: पितृसत्ता द्वारा नियंत्रण और असमानता।

जनवादी कविताएँ स्त्री की मौन पीड़ा को शब्द देती हैं। उदाहरणतः मंगलेश डबराल की कविताओं में स्त्री जीवन की करुणा और संवेदना इस रूप में आती है कि वह समाज की विवशता का प्रतीक बन जाती है। वहीं राजेश जोशी की कविताएँ स्त्री को प्रतिरोध की शक्ति के रूप में चित्रित करती हैं - वह अन्याय के विरुद्ध खड़ी होती है, अपने अस्तित्व की लड़ाई स्वयं लड़ती है। आज जब समाज में स्त्रियाँ हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही हैं, तब भी हिंसा, असमानता और पितृसत्तात्मक मानसिकता बनी हुई है। जनवादी कविता इस द्वंद्व को उजागर करती है। वह बताती है कि स्वतंत्रता केवल बाहरी नहीं, बल्कि भीतर की मानसिक स्वतंत्रता भी आवश्यक है।

कविता यहाँ चेतावनी बनकर आती है - जब तक स्त्री की अस्मिता का सम्मान नहीं होगा, समाज का जनवाद अधूरा रहेगा। समकालीन जनवादी कविता में स्त्री का यथार्थ केवल सामाजिक रिपोर्ट नहीं, बल्कि चेतना का दस्तावेज़ है। इस कविता में स्त्री-काम करती है, सोचती है, सवाल उठाती है, प्रेम करती है और संघर्ष करती है। उसकी यह छवि भारतीय समाज की नई दिशा को रेखांकित करती है, जहाँ समानता, स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा एक साथ चलें। कविता अब केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है। आज का समाज तेजी से बदल रहा है, शिक्षा, सूचना और रोजगार के कारण स्त्री पहले से अधिक स्वतंत्र हो रही है लेकिन यह स्वतंत्रता अभी अधूरी है। कविता इसे पहचानती है -

"नौकरी मिल जाने से मुक्ति नहीं मिलती,

मुक्ति मिलती है सोच के बदलने से।"

हिंदी कविता के समकालीन परिदृश्य में ऋतुराज का नाम उन कवियों में लिया जाता है, जिन्होंने जनजीवन की यथार्थ भूमि पर अपनी काव्य दृष्टि का विकास किया। वे उन जनवादी कवियों की परंपरा में हैं, जिन्होंने कविता को संवेदना और सामाजिक उत्तरदायित्व का माध्यम माना। उनकी कविताओं में स्त्री केवल प्रेम या करुणा का विषय नहीं है, बल्कि वह संघर्षरत जीवन का जीवंत प्रतीक है।

"हर मौसम में हँसती है गरीब स्त्री

स्वर्ण जैसी तपकर निखरती है जीवन की तपिश में

वर्षा में चाँदनी के फूल की तरह

स्वच्छ सफ़ेद दिखाई देती है

शरद में सेब की लालिमा लिये

चेहरा निहारती है दर्पण में

शीत में सिंकी मूंगफली के दानों की तरह

उष्मा बिखेरती है उसकी आत्मीयता

मैंने उसे कभी उदास नहीं देखा

नीले वितान के पश्चिम से आते हैं बादल

पूरब से आती है हवा

इन दोनों के मिलन स्थल पर खड़ी वह

गुनगुनाती है कोई लोकगीत।"

इस प्रकार ऋतुराज की कविताओं में स्त्री का चित्रण करुणा से नहीं, यथार्थ से उपजा है। वे स्त्री को दुःख-संवेदना की मूर्ति नहीं, बल्कि जीवन की ऊर्जा के रूप में प्रस्तुत करते हैं। यह स्त्री सामाजिक रूप से वंचित है, पर उसकी आत्मा पराजित नहीं। वह हर ऋतु में हँसती है, परिस्थितियों के ताप में तपकर स्वर्ण की तरह निखरती है।

समाज में स्त्री की जो स्थिति है; वह एक ओर घर-परिवार की आधारशिला है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक विषमता, गरीबी और अन्याय की मार झेलती हुई भी अपने अस्तित्व को बनाए रखती है। ऋतुराज की दृष्टि में यही स्त्री जीवन की सच्ची नायिका है। जनवादी कविता समाज की वास्तविकताओं का सामना करती है। यह शोषण, अन्याय, वर्गीय विषमता और लैंगिक असमानता के खिलाफ आवाज़ उठाती है। ऋतुराज की कविताएँ भी इसी जनवादी चेतना से संपृक्त हैं। वे स्त्री को केवल एक पीड़ित व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि सृजनशील, श्रमशील और जिजीविषा से भरी सामाजिक इकाई के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इनकी कविताएँ स्त्री की सामाजिक स्थिति का ऐसा यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती हैं जिसमें संवेदना, संघर्ष और सौंदर्य तीनों का समन्वय है।

उन्होंने स्त्री को किसी आदर्श या मिथकीय रूप में नहीं, बल्कि मानवता के जीवंत रूप में देखा है। उनकी 'गरीब स्त्री' जीवन की कठोरताओं में भी मुस्कुराती है, क्योंकि उसमें संघर्ष करने की अदम्य शक्ति है। ऋतुराज की यह दृष्टि न केवल जनवादी है, बल्कि मानवीय भी है। इनका काव्य यह सिखाता है कि स्त्री का यथार्थ केवल दुःख या करुणा में नहीं, बल्कि उसके श्रम, उसकी संवेदना और उसके आत्मबल में निहित है। ऋतुराज की अधिसंख्य कविताएँ स्त्री केन्द्रित कविताएँ हैं; जो वर्तमान बाज़ारू समय के बीच से निकल कर हमारे सम्मुख आती हैं और हमें अपने साथ खींच ले जाती हैं, उन दालानों में जहाँ सम्बन्धों की हरी दूब सूख रही है और हम अपने आपसे मोनोलाग करते नज़र आते हैं-

"वह फूल की तरह चुपचाप झरती है

फूल की तरह सतायी जाती है पर प्रतिवाद नहीं करती है

फूलवाली फूल की तरह मुझसे कहती है, ले चलो मुझे

जहाँ होऊँगी वहीं खिलखिलाऊँगी

फूल की तरह नष्ट हो जाऊँगी।"

इस तरह की कविताओं का समवेत स्वर स्त्री मन की गिरह खोलता है और हमारे हाथ को झिंझोड़कर पूछता है-

"देख लिया न कि किसी औरत के सच को

यहाँ कोई भी सुनने को तैयार नहीं है।"

तभी तो इन कविताओं में हमारे समक्ष घर में और घर के बाहर कार्यालय और बाज़ार में जूझती स्त्री में, मन की थाह लेती कई स्त्रियाँ विभिन्न रूपों में दिखाई देती हैं और हमें उदासी से खींच कर बाहर ले आती है-

"ये कभी स्त्रियाँ थीं जिन्हें तैरना पसन्द था

मेरी माँ के वक्ष में एक स्वप्न था।"

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री को अधिकतर यह पता ही नहीं लगता कि उसकी अभिरुचियाँ और जीवन-दृष्टि उसकी अपनी अर्जित की हुई नहीं हैं; बल्कि जन्म से ही उसकी रक्त-मज्जा में जो सोच घोल दी गई है, वह उसी के साथ जिए जा रही है। 'आशा नाम नदी' संग्रह में संकलित कविता 'महिला पुलिस और उसकी बहन' में वह लिखते हैं -

"आज इस जुलूस में तुझे सबक सिखाऊँगी

तू मेरे बाल नोचेगी

और मैं तुझे नीचे पटककर डंडे से मारती रहूँगी

जितनी चीखेगी उतनी ही मार खाएगी

हमें आदमी जितना क्रूर बनना सिखाया जाता है

हमसे कहा जाता है कि जहाँ कहीं भी महिलाएँ

तोड़फोड़ और बग़ावत पर आमादा हों

उनकी अच्छी तरह धुनाई की जाए

'बहुतेरी ऐसी हैं जो आदमी से पिटने पर भी

कुछ नहीं कहती है

सखाराम बाइंडर? नहीं, नहीं, नाटक वाली बात नहीं

महिला पुलिस को बहुत सख्त होना पड़ता है

आदमी क्या जाने कि कौन-कौन से नाजुक अंग

हमारे शरीर के उससे बचे हैं

जहाँ डंडा मारने से बरसों तक दुखता रहता है।"

इन पंक्तियों का व्यंग्य नारी जीवन के विद्रूप को व्यक्त करता है और स्पष्ट करता है कि नारी चेतना के सारे प्रयासों के बावजूद नारी की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

हमारे समाज में लड़की बहुत बड़ी समस्या होती है, क्योंकि उससे जुड़े हुए अनेक सवाल लड़की के माता-पिता को झेलने पड़ते हैं। साथ ही लड़की को भी सामाजिक विद्रूपों का सामना करना पड़ता है। ऋतुराज के 'लीला

मुखारविंद' संकलन की 'कन्यादान' कविता समाज में लड़की से सम्बन्धित सारी विषमताओं को व्यक्त कर देती है-

"माँ ने कहा पानी में झाँककर

अपने चेहरे पर मत रीझना

आग रोटियाँ सेंकने के लिए है

जलने के लिए नहीं

वस्त्र और आभूषण शाब्दिक भ्रमों की तरह

बंधन हैं स्त्री जीवन के

माँ ने कहा लड़की होना पर

लड़की जैसी दिखाई मत देना।"

'पुल पर पानी' में संकलित कविता 'मास्टरनी और गुलाब' नामक कविता में ऋतुराज ने एक ऐसी युवती का वर्णन किया है, जो मास्टरनी है लेकिन व्यवस्था की मार सहन करती हुई जीवन में घिसटती रहती है। उसे स्वयं पता नहीं कि उसका शत्रु कौन है-

"उसे रचना ने मारा है

घायल किया है

अ-व्यवस्था की अ-हिंसा ने

जो हर किसी युवती को मारती है

एक-एक ईंट रखती हुई धीरे-धीरे

उसके टूटे मन में

अ से अनार की टूटी स्मृति और इच्छा है

और वह मरती भी नहीं

रेंगती है सारे शहर के समान ...।"

ऋतुराज की कविताओं में आया 'मातृत्व का सौंदर्य' उन्हें अधिक अनूठा और मनुष्यधर्मी बनाता है। उनकी कविता 'माँ का दूध' अपने दृश्य में जितनी मार्मिक है, उतनी ही प्रतीकात्मक भी। कवि समाज के उस वर्ग की ओर देखता है जिसे सामान्यतः साहित्य में कम स्थान मिलता है- खान मजदूरों की स्त्रियाँ, उनका जीवन, उनका मातृत्व और उनके संघर्षों की नंगी सच्चाई-

"सड़क पर दौड़ते ट्रक के ऊपर

खुले केबिन में बैठी खान मजदूरिन

अपने बच्चे को दूध पिला रही है

फुहारें छोड़ते दो बादल हैं उसके स्तन

पति थामे बैठा है उसके कन्धे

कि भागते हुए ट्रक के झटकों से

कहीं दूध की धार फिसल नहीं जाए

हाय, यह क्या हुआ !!

एक पिचकारी छूटी

और बच्चे की तृप्त अधमुँदी आँखें

नहा गईं माँ के दूध में"

समकालीन हिंदी जनवादी कविता स्त्री के बहुआयामी जीवन को उसके वास्तविक रूप में प्रस्तुत करने वाली एक शक्तिशाली काव्यधारा है। इस कविता ने उस स्त्री को केंद्र में लाया है, जो सदियों से सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक बंधनों में जकड़ी रही है। परंतु फिर भी अपने श्रम, संवेदना और संघर्ष के माध्यम से जीवन का नया अर्थ रचती हैं। जनवादी कवियों ने स्त्री की पीड़ा को केवल करुणा के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक सच्चाई और परिवर्तन की प्रेरक शक्ति के रूप में स्वर दिया है। जनवादी कविता आज के पितृसत्तात्मक समाज को यह चेतावनी देती है कि जब तक स्त्री की अस्मिता, गरिमा और अधिकारों का वास्तविक सम्मान नहीं किया जाएगा, तब तक सामाजिक जनतंत्र और मानवता का सपना अधूरा रहेगा।

संदर्भ सूची -

1. ऋतुराज, (2007), आशा नाम नदी (प्रथम संस्करण), वाणी प्रकाशन
2. ऋतुराज, (2013), स्त्रीवग्ग (प्रथम संस्करण), बोधि प्रकाशन
3. धूमिल, (2023), कल सुनना मुझे, वाणी प्रकाशन
4. लीलाधर जगूड़ी, (2008). नाटक जारी है (प्रथम संस्करण), पंचशील प्रकाशन
5. ऋतुराज, (1981), पुल पर पानी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
6. ऋतुराज, (2008), कवि ने कहा, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली ।
7. ऋतुराज (2019), हम उत्तर मुक्तिबोध हैं, कलमकार मंच
8. शिवकुमार शर्मा, (2006), हिंदी साहित्य: युग और प्रवृत्तियां, अशोक प्रकाशन
9. बच्चन सिंह, (2025), हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन
10. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, (2010), समकालीन हिंदी कविता, राजकमल प्रकाशन
11. गौरीनाथ (सं.), जनवरी - मार्च 2023, बया पत्रिका, अंतिका प्रकाशन